P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-7* (Part-1) March- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

संस्कृत काव्यशास्त्र में अलंकारो का विवेचनात्मक अध्ययन

मनोज कुमार जोशी
शोधार्थी,
संस्कृत विभाग,
सी0 टी0 यू0 अहमदाबाद,
गुजरात

सारांश

संस्कृत काव्यशास्त्र में अलंकार का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। आचार्य भामह से लेकर दंडी तक के सभी आचार्यों ने अलंकारों को काव्य का प्रमुख तत्व माना है। काव्य में जिस चमत्कार तत्व की उपलब्धि होती है उसके आधार अलंकार ही है। यही कारण है कि ध्वनि संप्रदाय के प्रतिष्ठापक आनंदवर्धन को भी ध्वनि तत्व को समासोक्ति इत्यादि अलंकारों से पृथक सिद्ध करने में अनेक प्रकार की युक्तियों का सहारा लेना पड़ा।

आचार्य रुय्यक विरचित अलंकार सर्वस्व अलंकार शास्त्र की प्रमुख कृ तियों में से एक है। रुय्यक गतानुगतिक नहीं है। यह किसी अलंकार की परिभाषा एवं उसके लक्षणों को अपनी मौलिकता अक्षुण्ण्य रखते हुए स्थापित करने का प्रयास करते हैं। फलस्वरुप इनकी यह रचना उत्कृष्ट कोटि की है।

मुख्य शब्द : अलंकार, ध्वनि, आनंदवर्धन, संप्रदाय, मौलिकता

प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य में अलंकारों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। संस्कृत के विद्वानों के अनुसार– काव्य की शोभा बढ़ाने वाले तत्वों को अलंकार कहते हैं। "काव्यशोभाङ्करान् धर्मानलंकारान् प्रचक्षते।।" अलंकार वाणी के श्रृंगार एवं काव्य के सौंदर्य के साधन है। भारतीय आचार्यों ने अलंकार को ''सौंदर्यम् अलंकारः'' कहा हैं। विभिन्न विद्वानों द्वारा अलंकार को विभिन्न रूपों में प्रतिपादित किया गया है– जैसे ''भूषणं पर्यान्त करोतित्यलंकारः।'' इस प्रकार काव्य को शब्दार्थ द्वारा अलंकृत करने वाली रचना को संस्कृत साहित्य में अलंकार कहते हैं। वेदों की रिचाओं में भी उपमा, पर्याय तथा रूपक जैसे अलंकारों की सौंदर्य वीथिका प्राप्त होती है।[1]

संस्कृत काव्यशास्त्र में अलंकार का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। आचार्य भामह से लेकर दंडी तक के सभी आचार्यों ने अलंकारों को काव्य का प्रमुख तत्व माना है। काव्य में जिस चमत्कार तत्व की उपलब्धि होती है उसके आधार अलंकार ही है। यही कारण है कि ध्वनि संप्रदाय के प्रतिष्ठापक आनंदवर्धन को भी ध्वनि तत्व को समासोक्ति इत्यादि अलंकारों से पृथक सिद्ध करने में अनेक प्रकार की युक्तियों का सहारा लेना पड़ा।

आचार्य रुय्यक विरचित अलंकार सर्वस्व अलंकार शास्त्र की प्रमुख कृ तियों में से एक है। रुय्यक गतानुगतिक नहीं है। यह किसी अलंकार की परिभाषा एवं उसके लक्षणों को अपनी मौलिकता अक्षुण्ण्य रखते हुए स्थापित करने का प्रयास करते हैं। फलस्वरुप इनकी यह रचना उत्कृष्ट कोटि की है।

अलंकार सर्वस्व पर जयरथ की विमर्शिनी नामक टीका उपलब्ध होती है। जयरथ अलंकार शास्त्र के उद्भट विद्वान है। यह व्याकरण, दर्शन एवं काव्यशास्त्र की संपूर्ण शाखाओं से सुपरिचित है। इन्होंने अपनी टीका के प्रारंभ में वाक् तत्व का उल्लेख किया है। वैयाकरणों ने शब्द ब्रह्म को संपूर्ण सृष्टि का उपादान कारण माना है। वाक् तत्व के निरूपण में इन्होंने परा वाक् का उल्लेख किया है। आचार्य भर्तृहरि एवं महाभाष्यकार पतंजलि के ग्रंथों में भी इसी वाक् तत्व का विशद वर्णन उपलब्ध होता है। आचार्य जयरथ की यह तत्व मीमांशा व्याकरण शास्त्र से अनुप्राणित है। इसी प्रकार अलंकारों के लक्षणों की मीमांसा करते हुए यह उनके पद कृत्य पर भी पूर्व प्रकाश डालते हैं। इनकी इस विमर्शिनी टीका में दार्शनिक एवं काव्यशास्त्रीय दोनों तत्वों का एकत्र समाहार है। इस प्रकार इनके इस टीका ग्रंथ के अध्ययन से न केवल काव्यशास्त्रीय मान्यताओं पर ही प्रकाश पड़ता है, अपितु दर्शन, व्याकरण व शास्त्रीय मान्यतायें उद्भाषित होती हैं।

अलंकारों का प्रयोग सर्वप्राचीन ग्रंथ ऋग्वेद में हुआ है। ऋग्वेद में अनुप्रास, यमक, श्लेष, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति आदि अलंकारों के दर्शन होते हैं। तद्नंतर ब्राह्मण ग्रंथों तथा उपनिषदों में अलंकार का प्रयोग सौंदयवर्धक तत्व के रूप में हुआ है।[2]

शोध के उद्देश्य

1. प्रस्तुत शोध पत्र में अलंकार शास्त्र का ऐतिहासिक विवेचन किया जाएगा। जिससे अलंकारों के स्वरूप निरूपण, भेद विस्तार तथा इसका नाट्यशास्त्र से पारस्परिक संबंध को स्पष्ट किया जाएगा।
2. प्रस्तुत शोध पत्र के अंतर्गत भरतमुनि के नाट्यशास्त्र की चर्चा करते हुए इसमें विवेचन, उपमा, रूपक, दीपक, यमक अलंकारों का स्वरूप निर्दिष्ट किया जाएगा।
3. प्रस्तुत शोध पत्र में अलंकारों के विकास एवं वर्गीकरण का भी अध्ययन किया जायेगा।
4. शोध पत्र के माध्यम से प्राचीन अंलकार शास्त्र के महाकवियों की जीवनी एवं कृतित्व से नयी पीढ़ी का परिचय कराया जायेगा।

शोध अभिकल्प / प्रविधि

अभिकल्प शब्द का अभिप्राय पूर्व निर्धारित रूपरेखा हैं। एकोफ ने अभिकल्प या संरचना शब्द की व्याख्या इस उपमा द्वारा की हैं। एक भवन निर्माणकर्त्ता भवन का अभिकल्प या प्ररचना पहले से ही बना लेता है, कि यह कितना बड़ा होगा, इसमें कितने कमरे होगें, कौन सी सामाग्री का प्रयोग इसमें किया जायेगा इत्यादि। ये सब निर्णय वह भवन निर्माण से पहले ही बना लेता हैं, तांकि भवन के बारे में एक नक्शा बना ले तथा यदि इसमें किसी प्रकार का संशोधन करना हैं तो इसमें निर्माण शुरू होने से पहले ही किया जा सके। उसी तरह अनुसंधान कार्य में भी शोध अभिकल्प को पहले ही निधारित कर लिया जाता हैं।

प्रस्तुत शोध पत्र में कार्य की प्रकृति को देखते हुए ऐतिहासिक एवं विवेचनात्मक शोध अभिकल्प का प्रयोग किया गया है, एवं वर्णन, व्याख्या, विश्लेषण, समीक्षा एवं तुलना आदि शोध विधियों का प्रयोग करके शोध कार्य को पूर्ण किया गया। अन्य अध्ययनो की तरह इसका आधार भी सैद्धान्तिक है। सैद्धान्तिक अध्ययन के अर्न्तगत विभिन्न पुस्तकों, ग्रन्थों, महाकाव्यों आदि से अध्ययन सामाग्री को एकत्र किया गया।

साहित्यावलोकन

साहित्य पुनरावलोकन दो शब्दों से मिलकर बना हैं "साहित्य तथा उसका पुनः अवलोकन करना"। साहित्य शब्द किसी विषय के अनुसंधान की विषयवस्तु एवं ज्ञान की ओर सकेत करता हैं जिसकें अंर्तगत सैद्वान्तिक एवं व्यावहारिक शोध अध्ययन आ जाते हैं। पुनरावलोकन शब्द का अर्थ शोध के विशेष क्षेत्र के ज्ञान की व्यवस्था करना एवं ज्ञान को विस्तृत करके यह दर्शाना कि उसके द्वारा किये गए अध्ययन के क्षेत्र में योगदान होता है।

सभी प्रकार की पुस्तकों, ज्ञानकोशों, पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों आदि के अध्ययन से अनुसंधानकर्ता को अपनी समस्या के चयन, परिकल्पना के निर्माण अध्ययन की रूपरेखा तैयार करने एवं कार्य को आगे बढ़ाने में सहायता मिलती हैं। अनुसंधान कार्य बिना सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन किये पूरा नही हो सकता। इसकी सहायता के बिना अनुसंधान कार्य करने वाला "अंधेरी गलियों" से भटकने वाली स्थिति में पहुंच जाता हैं। संबधित साहित्य उसे दिशा की ओर बढ़ाता हैं। बिना संबधित साहित्य के अध्ययन के शोधकर्ता न तो समस्या का चयन कर सकता है। न समस्या का सीमांकन कर सकता हैं और न अध्ययन की रूपरेखा तैयार कर सकता हैं। शोध पत्र में भी शोध कार्य से पूर्व कुछ प्रमुख ग्रन्थों का अध्ययन किया गया हैं– वक्रोक्ति जीवितम् (आचार्य कुन्तक), काव्यालंकार (भामह), नाट्यशास्त्र (भरतमुनि), संस्कृत साहित्य का इतिहास (वाचस्पति गैरोला), गीत गोविंद (जयदेव), संस्कृत साहित्य का इतिहास (बलदेव) आदि। अनेकों शोधग्रन्थों का अध्ययन करने के उपरान्त देखा गया कि साहित्य के इस क्षेत्र में शोध कार्य बहुत ही सीमित है। इसलिए शोद्यार्थी द्वारा शोध कार्य हेतु उक्त क्षेत्र का चयन किया गया हैं।

प्रस्तुत शोध पत्र अनेक दृष्टियों से संस्कृत साहित्य के अध्ययनकर्ता, शोधकर्ताओं एवं काव्य प्रेमियों, अलंकार अध्येताओं आदि के लिए महत्वपूर्ण सिद्ध होगा। भारतीय दर्शन संप्रदाय ने वाक् तत्व को चार भागों में विभक्त करते हुए इसकी समुचित समीक्षा की है। वैयाकरणों ने वाक् के तीन भेदों को ही स्वीकार किया है।

ऋग्वेद में कहा गया है – "यावत् ब्रह्मा विष्ठितं तावत् वाक्" अर्थात् जितना ब्रह्मा व्यापक है, उतनी ही वाग्देवी भी व्यापक है। ऐतरेय शतपथ, जैमिनीय, गोपथ आदि ब्राह्मण ग्रंथ उसी वाक् शक्ति को साक्षात ब्रह्म मानते हुए कहते हैं कि वाक्शक्ति ही ब्रह्म है। यजुर्वेद सुंदर अलंकार विथिकाओं से पूर्ण है। पांचवे काण्ड का दशम सूक्त रोचक सरस तथा अभिव्यंजना पूर्ण है, दुंदुभी सूक्त में सुंदर मालोपमा का सौंदर्य नितांत श्लाघनीय है।[3]

ब्राह्मण ग्रंथों में भी अलंकारों का प्राचुर्य है। अलंकार विधान का चारूत्व गोपथ ब्राह्मण में दृष्टव्य है। शाकल्य का हवन करने वाला मनुष्य पापों से उसी प्रकार मुक्त हो जाता है, जिस प्रकार सर्प अपनी केचुली से छूट जाता है, एवं इसिका मुंज से छूट जाती है।[4]

भर्तृहरि वेदों और ब्राह्मणों में प्रतिपादित वाक् शक्ति शब्दशक्ति के स्वरूप का प्रतिपादन करते हुए लिखते हैं कि शब्दों में ही वह शक्ति है कि वह संसार को एक सूत्र में बांधे हैं शब्द ही नेत्र हैं अर्थात् समस्त वस्तुओं का ज्ञापक है। श्रुति का कथन है कि वाक्शक्ति ही अर्थ को देखती हैं। वाक् तत्व ही जब बुद्धिरूप विवत को प्राप्त होता है, तब अर्थ का ज्ञान कराता है। वाक् शक्ति ही समस्त व्यवहार की साधनभूत है। यही शक्ति रूप से विद्यमान अर्थ को विस्तृत करती हैं। समस्त संसार नाना रूपों को धारण करता हुआ उसी में निबंध है। उसी एक वाक् शक्ति का विभाजन करके समस्त संसार का व्यवहार चलता है। वैयाकरण वाक् शक्ति के द्वारा ही इस सृष्टि की उत्पत्ति मानते हैं। शब्द ब्रह्म के द्वारा ही समस्त संसार का कार्य चलता है। श्रुति का कथन है कि वाक् शक्ति ही संसार को उत्पन्न करती है तथा वाणी के द्वारा ही

अविनाशशील तथा विनाशशील संपूर्ण संसार की सृष्टि होती है। शब्द अनादि और अक्षय है।

अलंकारशास्त्रियों द्वारा शब्द की तीन शक्तियों का निरूपण किया गया है– अभिधा, लक्षणा और व्यंजना। इन्हीं के माध्यम से शब्द वाचक, लाक्षणिक और व्यंजक रूप में पहचाना जाता है। वस्तुतः जो अतिशय तत्व है वही अलंकार है। अलंकृतत्व काव्यात्मा का एक सामान्य और व्यापक तत्व है। अतएव काव्य के प्रमुख तत्व के रूप में अलंकार की व्युत्पत्ति, ऐतिहासिकता, वर्गीकरण एवं विश्लेषण अभीष्ट है।

अलंकार वाणी के श्रृंगार एवं काव्य के सौंदर्य के साधन है। जिस प्रकार लोक में रत्न आदि से निर्मित आभूषण शरीर को अलंकृत करता है, उसी प्रकार काव्य को शब्दार्थ द्वारा अलंकृत करने वाली रचना को काव्यशास्त्र में अलंकार कहते हैं। अलंकार और अलंकार्य का घनिष्ठ संबंध है। बिना अलंकार्य के अलंकारों की सत्ता का आभास संभव नहीं है। अतः संस्कृत साहित्य के सृजन के साथ साथ अलंकारों का इतिहास भी प्रारंभ होता है। प्राचीन भारतीय साहित्य शास्त्र में अलंकारों का विशद् विवेचन किया गया है। उनके स्वरूप निरूपण, भेद विस्तार तथा उनके पारस्परिक संबंध के विषय में गंभीर उहापोह किए गये हैं। अलंकारों के वर्गीकरण के संबंध में भी अलंकारिकों के मतों की विभिन्न धाराएं प्रस्फुटित हुई हैं।

एक मंत्र में परमात्मा को संसार को पार करने वाला सेतु अक्षर परम पद आदि अनेक रूपों में उल्लिखित किया गया है।[5] धर्म सूत्रों में यत्र तत्र अलंकारों की छटा दर्शनीय है, महर्षि वशिष्ठ का धर्मशास्त्र मात्रा में स्वल्पकाय होने पर भी गुणों में विपुल और महनीय है। गुणग्राही ज्ञानी के लिए अलंकारों का सुंदर सौष्ठव अधिक बोधगम्य हो जाता है। स्मृतिकार वशिष्ठ का उपमा का सौंदर्य श्लाघनीय है, उनका कथन है कि आचार्य रहित व्यक्ति के लिए यज्ञ भी उसी प्रकार प्रीति उत्पन्न नहीं कर सकता जिस प्रकार अंधे के हृदय में सुंदर भार्या।[6]

निष्कर्ष

इस विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि हमारे आदि साहित्य में भी अंलकारों का विवेचन प्राप्त होता हैं। तथापि अंलकार जगत में भरत मुनि से पहले ऐसा कोई आंलकारिक नहीं हुआ जिसने प्रेरणा स्रोत के रूप में आंलकारिकों को नई दिशा दिखाई। आदिप्राचीन अनेकों महाकवियों का एक ही शोध ग्रन्थ में समागम निश्चय ही आगामी अध्ययन कर्ताओं के लिए मील का पत्थर साबित होगा। वैदिक ऋषि भी सूक्ष्म आध्यात्मिक चिंतन को बोधगम्य बनाने में पूर्ण सक्षम थे, उन्होंने कविता कामिनी के कलेवर को विविध अलंकारों से सुसज्जित कर जनमानस को कृतार्थ किया।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *त्रयम्बकं यजामहे सुगंधिं पुष्टिवर्धनम् ।*
   उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ।। – यजुर्वेद 3/60
2. *वसनेन अलंकारेण संस्कुर्वन्ति ।। – छान्दोग्योपनिषद 8/8*
3. *यथा श्येनात् पतत्रिणः संविजन्ते अहर्दिवि सिंहस्य स्तनथोर्यथा ।*
   एवा त्वं दुन्दुभे मित्रानभिकन्द प्रत्रासयाथे चिन्तानि मोहय ।। – अथर्ववेद 5/21/6
4. *यद् यथाहिर्जीर्णायास्त्वचों निर्मुच्यते इषीका वा मुंजात्। एवं ह वै ते सर्वस्मात् पाप्मनः समुच्यन्ते ये शाकलां जुहति। – गोपथ ब्रा0 उत्तर, 4/6*
5. *यः सेतुरीजनानामक्षरं ब्रह्म यतपरम् ।*
   अभयं तितीर्षतां पारं नाचिकेतं शकेमहि ।। – कठोपनिषद, प्रथम अध्याय, तृतीय वल्ली, मंत्र– 2
6. *आचारहीनस्य तु ब्राह्मणस्य वेदाः षडंगास्त्वखिलाः सयज्ञाः।*
   कां प्रीतिमुत्पादयितुं समर्था अन्धस्य दारा इव दर्शनीयाः।। – वसिष्ठ धर्मशास्त्र – 6/4